कथा लोक

❑ वसीली सुखोम्लीन्स्की

कथा-कहानियां, खेल, कल्पना- यह बाल-चिंतन का, उदात्त भावनाओं और आकांक्षाओं का जीवनदायी स्रोत है। हमारा कई वर्षों का अनुभव इस बात की पुष्टि करता है कि कथा-कहानियों के बिंबो के प्रभाव में बाल आत्मा में उत्पन्न होने वाली सौंदर्यबोधात्मक, नैतिक और बौद्धिक अनुभूतियां विचारों के प्रवाह को सक्रिय बनाती हैं, जो मस्तिष्क को सक्रिय कार्य की प्रेरणा देता है, चिंतन के जीवंत ''द्वीपों'' को सुदृढ़ तारों से जोड़ता है। कथा-कहानियों के बिंबों के जरिए शब्द अपनी सूक्ष्मतम छटाओं के साथ बाल-चेतना में प्रवेश करता है; वह बच्चे के आत्मिक जीवन का क्षेत्र, उसके विचारों और भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम-चिंतन का सजीव यथार्थ बन जाता है। कथा-कहानियों के बिंबों द्वारा जगाई गई भावनाओं के प्रभाव में बच्चा शब्दों के माध्यम से सोचना सीखता है। ऐसी सजीव, ज्वलंत कहानियों के बिना, जो बच्चे की चेतना और भावनाओं पर छा जाएं, मानव-चिंतन और वाणी के निश्चित चरण के रूप में बाल-चिंतन और बाल-वाणी की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

बच्चों को इस बात से गहरा संतोष मिलता है कि उनके विचार कथा-कहानियों के संसार में रहते हैं। बच्चा एक ही कहानी को पांच, दस बार सुन सकता है और हर बार उसे उसमें कोई नई बात दिख सकती है। कहानियों के बिंब सजीव, सुस्पष्ट तथा ठोस से अमूर्त की ओर पहला कदम है। मेरे छात्रों के आत्मिक जीवन में अगर कथा-कहानियों का एक पूरा काल न होता, तो उनमें शायद अमूर्त चिंतन की क्षमता इतनी अच्छी तरह न विकसित हो पाती। बच्चे खूब अच्छी तरह यह समझते हैं कि संसार में दुष्ट चुड़ैल या राजकुमारी मेंढ़की या राक्षस नहीं हैं, लेकिन वे इन बिंबों में भलाई और बुराई का मूर्त रूप देखते हैं। एक ही कहानी को सुनाते हुए वे अच्छाई और बुराई के प्रति अपना निजी रुख व्यक्त करते हैं।

कथा-कहानियों को सौंदर्य से अलग नहीं किया जा सकता, वे बच्चों में सौंदर्य की भावना विकसित करती हैं, जिसके बिना आत्मा की उदात्तता लोगों की यातनाओं, दुख-दर्द के प्रति हृदय की संवेदनशीलता नहीं हो सकती। कथा-कहानियों की बदौलत बच्चा न केवल मस्तिष्क से, बल्कि हृदय से भी संसार को जानता समझता है और वह केवल जानता-समझता ही नहीं, बल्कि चारों ओर के संसार की घटनाओं पर प्रतिक्रिया भी दर्शाता है, भलाई और बुराई के प्रति अपना रवैया भी प्रकट करता है। कथा-कहानियों में ही बच्चे पहली बार न्याय और अन्याय की बात सुनते और समझते हैं। बच्चे के पहले विचार और धारणाएं भी कथा-कहानियों की मदद से बनते हैं। बच्चे विचार को केवल तभी समझ पाते हैं जबकि वह ज्वलंत बिंबों में मूर्तिमान हो।

बच्चों में मातृभूमि के प्रति प्रेम की भावना विकसित करने के लिए कथा-कहानियां अद्वितीय साधन हैं। कहानी का देश-भक्तिपूर्ण विचार उसके अंतर्य की गहनता में निहित होता है; सदियों से लोग जो कथा-कहानियां बनाते आए हैं, उनके बिंब बच्चों को मेहनतकश जनता की सशक्त सृजन भावना का, जीवन के प्रति उसके दृष्टिकोण, उसके आदर्शों और आकांक्षाओं का आभास दिलाते हैं। लोक-कथा में बच्चों में मात्र इसीलिए ही मातृभूमि के प्रति प्रेम जगाने की शक्ति होती है कि वह जनगण द्वारा रची हैं। जब हम कीयेव के सोफिया मठ में अनुपम भित्तिचित्रों को देखते हैं, तो हम उन्हें जन-जीवन के एक अंश के रूप में, जन-प्रतिभा के सृजन के रूप में ग्रहण करते हैं, और हमारे मन में जनता की सृजन भावना, उसके विचार, उसके कौशल पर गर्व की भावना जागती है। बाल-आत्मा

पर लोक-कथा का प्रभाव भी कुछ ऐसा ही होता है। लगता है कि लोक कथा का कथानक आम जीवन की घटना पर ही आधारित है। दादा-दादी ने शलगम उगाया, ... दादा ने भेड़िए को धोखा देने की सोची, सो पुआल का बछड़ा बनाया,... परंतु लोक-कथा का हर शब्द अमर भित्तिचित्र पर हल्की रेखा के समान है, हर शब्द में, हर बिंब में जन-मानस की सृजन शक्ति व्यक्त होती है। लोक-कथाएं लोक संस्कृति की आत्मिक संपदा हैं, जिसे देखते-समझते हुए बच्चा अपने हृदय से अपने जनगण का बोध पाता है।

''खुशियों का स्कूल'' खुलने के तीन महीने बाद हमने अपना ''कथा-लोक'' बनाया। बड़े छात्रों की मदद से एक कमरे में ऐसी चीजें बना दीं, जिनके बीच बच्चों को लगे, मानो वे कथा-कहानियों के बिंबों से घिरे हुए हैं। हमें ऐसा वातावरण बनाने के लिए काफी मेहनत करनी पड़ी, जहां की हर चीज सांझ के झुटपुटे की और उन कहानियों की, जो कभी मां ने सुनाईं थीं, याद दिलाए। एक कोने में हमने दुष्ट चुड़ैल की झोंपड़ी बनाई, जो कहानी के अनुसार मुर्गी की टांगों पर खड़ी थी, उसके चारों ओर ऊंचे पेड़ और ठूंठ थे, झोंपड़ी के पास ही लोक-कथाओं के दूसरे नायकों की आकृतियां थीं : चालाक लोमड़ी, भूरा भेड़िया, दूसरे कोने में दादा-दादी का घर, आसमान में हंस थे, जो अपने परों पर उक्राइनी लोक कथा के छोटे-से लड़के को चुराए ले जा रहे थे। तीसरे कोने में नीला सागर-महासागर था, जिसके किनारे पर नेक बूढ़े और चिढ़चिढ़ी बुढ़िया की टूटी-फूटी झोंपड़ी थी, दहलीज के पास लकड़ी का टूटा हुआ टब रखा था, बुढ़ढ़ा-बुढ़िया एक लट्ठे पर बैठे थे और समुद्र में सुनहरी मछली तैर रही थीं। चौथे कोने में शीतकालीन वन था, जिसमें हिम के टीले बन गए थे, और उनके बीच छोटी-सी बच्ची बर्फ में धंसती हुई जा रही थी- दुष्ट सौतेली मां ने उसे जंगल से बेरियां लाने भेजा था... छोटी-सी झोंपड़ी की खिड़की में से बकरा झांकता था। एक ओर बड़ा-सा दस्ताना रखा था, जिसमें चूहे का घर था। प्लाईवुड से हमने एक बड़ा ठूंठ बनाया था, जिस पर गुड़िया रखी थीं- नन्हीं-मुन्नी बच्ची, खरगोश, लोमड़ी, भेड़िया, भालू, पुआल का बछड़ा, लाल टोपीवाली लड़की।

यह सब हमने अपने हाथों बनाया था। मैं आकृतियां काटता था, तस्वीरें बनाता और चिपकाता था, बच्चे मेरा हाथ बंटाते थे। मैं उस वातावरण के सौंदर्यात्मक पहलू को बहुत महत्त्वपूर्ण समझता था, जिसमें बच्चे कथा-कहानियां सुनेंगे। कमरे में हर तस्वीर, प्रत्येक दृश्य-बिंब कहानियों के शब्दों के प्रति बच्चों की ग्रहणशीलता बढ़ाता था, कहानी के विचार को अधिक गहराई से उजागर करता था। कहानियों के कमरे में रोशनी का भी अपना महत्त्व था। जब राजकुमारी मेंढकी की कहानी सुनाई जाती, तो जंगल में छोटी-छोटी बत्तियां जलती थीं, कमरे में हरा झुटपुटा होता था, जो उस वातावरण का सृजन करता था, जिसमें कहानी की घटनाएं होती हैं।

कहानियों के कमरे में मैं बच्चों को बहुत ज्यादा नहीं ले जाता था- हफ्ते में एक बार या दो हफ्तों में एक बार। सौंदर्य-पिपासा की अतितृप्ति नहीं की जानी चाहिए। जहां अतितृप्ति होती है वहां नाक-भौंह चढ़ाने की प्रवृत्ति, छिछोरी निराशाएं, बोरियत और वक्त जाया करने के साधनों की खोज शुरू हो जाती है।

शरद और जाड़ों में संध्या समय हम अपने कहानियों के कमरे में जाते हैं। सांझ के झुटपुटे में कथा-कहानियां सुनने में बच्चों के लिए विशेष आकर्षण होता है, ऐसा आकर्षण और किसी समय, उदाहरणत: दोपहर को नहीं आता। बाहर अंधेरा छाता जा रहा है, हम कमरे में रोशनी नहीं करते, झुटपुटे में बैठे रहते हैं। सहसा एक कोने में बनी झोंपड़ी में बत्ती जल उठती है, आकाश में तारे चमकने लगते हैं, जंगल के पीछे से चंद्रमा निकलता है। कमरे में मंद-मंद प्रकाश फैल जाता है, कोनों में अंधेरा और भी घना हो जाता है। मैं बच्चों को दुष्ट चुड़ैल की लोक-कथा सुनाता हूं। यों तो मेरे शब्दों में बच्चों के लिए कोई भी नई बात नहीं है, लेकिन उनकी आंखों में विमुग्धता की चमक है। बच्चे कहानी के नायकों के दुख में दुखी होते हैं, खुशी में खुश होते हैं। उन्हें बुराई से नफरत होती है और भलाई का वे बड़े उत्साह से स्वागत करते हैं। दुष्ट चुड़ैल, भोली-भाली बच्ची अल्योन्का और हंसों की आकृतियां उनकी कल्पना में सजीव हो उठती हैं, उन्हें लगता है कि वे सब भी ऐसे जीव हैं, जो सोच सकते हैं, सुख-दुख महसूस कर सकते हैं। ये बाल-कथाएं बच्चों के लिए अजीबो-गरीब, रोमांचक घटनाओं का विवरण ही नहीं होती हैं, उनके लिए तो यह एक पूरा संसार होता है, जिसमें वे रहते हैं, संघर्ष करते हैं, बुराई का अपनी अच्छाई से मुकाबला करते हैं। कथा-कहानियों में बच्चे की आत्मिक शक्ति को शब्दों में अभिव्यक्ति मिलती है, वैसे ही जैसे खेलकूद में गति और संगीत में धुन उसे व्यक्त करती है। बच्चा कहानी सुनना ही नहीं चाहता है, बल्कि सुनाना भी चाहता है, जैसे कि वह गीत सुनना ही नहीं, बल्कि गाना भी चाहता है, खेल देखना ही नहीं, खेलना भी चाहता है।

कुछ दिन बीतने पर बच्चे पूछने लगते हैं : '' 'कथा-लोक' कब चलेंगे ?'' हर्षमय क्षणों की प्रतीक्षा में बाल-हृदय पुलकित होता है। हम फिर सांझ के झुटपुटे में ''कथा-लोक'' में जाते हैं, फिर से पहले मैं कहानी सुनाता हूं और उसके पश्चात् बच्चे सुनाते हैं। ऐसे क्षणों में सबसे शर्मीले बच्चे भी निडर और दृढ़संकल्प हो जाते हैं। जो बच्चे आम बोलचाल में दो शब्द भी ठीक तरह से जोड़कर नहीं बोल पाते, वे भी कहानी सुनाते हुए धाराप्रवाह बोलने लगते हैं। नीना, पेत्रिक, ल्यूदा, स्लावा, वाल्या जैसे बच्चे, जिनके चिंतन और वाणी के विकास में कई कठिनाइयां हैं, वे भी कहानियां सुनाते हैं।

हर बार जब हम ''कथा-लोक'' में आते हैं, तो बच्चों का खेलने का मन करता है। लड़के-लड़कियां सभी अपना प्यारा खिलौना, गुड्डा-गुड़िया ढूंढ़ लेते हैं। खेल सृजनात्मक कार्य बन जाता है : लड़के-लड़कियां कथा-कहानियों के नायक बन जाते हैं और उनके हाथों में जो खिलौने होते हैं, वे उनके विचारों और भावनाओं को अधिक अच्छी तरह व्यक्त करने में सहायक होते हैं। एक बच्चा पुआल के बछड़े को उठा लेता है, दूसरा दादी-गुड़िया को, तीसरा दादा-गुड्डे को- और वे लोक-कथा के संसार में पहुंच जाते हैं। वे कहानी के शब्दों को ही नहीं दोहराते, बल्कि अपनी कल्पना से उसमें नई-नई बातें जोड़ते जाते हैं। कुछ बच्चियां यों ही गुड़ियों से खेलना चाहती हैं। एक बच्ची गुड़िया को छोटे-से खटोले में लिटाकर उसे लाड़-प्यार करती है, लोरी सुनाती है। दूसरी बच्ची की नन्हीं-मुन्नी गुड़िया बीमार पड़ गई है, वह उसकी टहल करती है।

मुझे इस बात पर कोई उलझन नहीं थी कि लड़के-लड़कियां कई बरसों तक गुड्डे-गुड़ियों से खेलते रहे। यह कोई ''बचपना'' नहीं है, जैसा कि कुछ अध्यापक सोचते हैं। गुड्डे-गुड़ियों में बच्चे उनका सजीव बिंब देखते हैं, जिन्हें फ्रांसीसी लेखक सेंट-एक्जुपेरी (1900-1944) के शब्दों वे **''अपना बनाना''** चाहते हैं। हर बच्चा यह चाहता है कि उसका अपना कोई हो, जिसे वह बेहद प्यार करे। मैं बड़े ध्यान से यह देखता था कि बच्चों और उनके प्यारे गुड्डे-गुड़ियों के बीच कैसे आत्मिक संबंध बनते हैं। मैं इस बात से खुश था कि लड़के भी काफी देर तक गुड्डे-गुड़ियों से खेलते रहते थे। कोस्त्या का प्यारा गुड्डा था - बूढ़ा मछेरा। गुड्डे की टांग बार-बार टूट जाती थी, आखिर कोस्त्या ने लकड़ी की टांग लगा दी और साथ ही मछेरे के हाथ में गांठदार लाठी भी थमा दी। अब वह लाठी के सहारे नदी पर मछली पकड़ने जाता था। कोस्त्या को अपने बूढ़े दोस्त से बातें करने का शौक था : वह उसे बताता था कि कहां कौनसी मछली होती है। लरीसा की प्यारी गुड़िया थी-दादी और पोती। लरीसा ने दादी के लिए ऐनक बना दी, उसके पैरों तले गरम नमदा बिछा दिया, कंधों पर दुशाला ओढ़ा दिया; वाल्या के पास भी दो गुड़िया थीं-छोटी सी बिल्ली और चुहिया । वाल्या हर हफ्ते बिल्ली के गले में नया रिबन बांधती थी और चुहिया के लिए न जाने क्यों हरा बिछौना ले आई थी।

''कथा-लोक'' में बच्चे कभी कल्पना की उड़ानें भरते न थकते थे। किसी नई वस्तु को देखते ही उनकी कल्पना-शक्ति उसे किसी दूसरी वस्तु के साथ जोड़ देती, उनके बारे में अजीबो-गरीब बातें बच्चों के दिमाग में उठतीं, कल्पना उड़ानें भरने लगतीं, विचारों की धारा फूट निकलती, आंखें चमकने लगतीं और वाणी-सरिता मुक्त होकर बहने लगती। इस बात को ध्यान में रखते हुए मैं यह कोशिश करता था कि ''कथा-लोक'' के अलग-अलग कोनों में तरह-तरह की ऐसी चीजें रखी हों, जिनके बीच कोई वास्तविक या काल्पनिक संबंध स्थापित किया जा सके। मुझे यही चिंता थी कि बच्चे कल्पना करें, सृजन करें, नई-नई कहानियां रचें। एक कोने में एक टांग पर खड़े बगुले के पास ही छोटा-सा, सहमा-सहमा-सा बिलौटा रखा हुआ था। बच्चों ने इन दोनों के बारे में कई कहानियां गढ़ीं। एक जगह छोटी-सी नाव रखी हुई थी और उसके पास ही मेंढ़क बैठा था - इन्हें तो देखते ही किसी कहानी में जोड़ने को मन होता था। एक छोटा-सा भालू मांद में से झांक रहा था और पास ही मच्छर और मक्खी थे, जो भालू की तुलना में बेहद बड़े थे (बाल कथाओं में ऐसा संभव है), एक छोटा-सा सूअर और उसके पास साबुन और पानी की बाल्टी पड़ी हुई थी- यह सब देखकर बच्चे मुस्कुराते ही नहीं थे, बल्कि यह उनकी कल्पनाशक्ति को जगाता था।

जब मैं अपने इस प्रयास में सफल रहता था कि ऐसा बच्चा, जिसके चिंतन में गंभीर कठिनाइयां थीं, वह कोई कहानी गढ़ ले, अपनी कल्पना में आस-पास की कुछ चीजों के बीच संबंध जोड़ ले, तब मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता था कि बच्चे ने सोचना सीख लिया है। मैं पहले भी इस बात का जिक्र कर चुका हूं कि वाल्या के चिंतन को सक्रिय बनाना और स्मरण-शक्ति सुदृढ़ करना कितना कठिन कार्य था। उसके चिंतन को सक्रिय बनाने का एक साधन था - चारों ओर के संसार की वस्तुओं और परिघटनाओं के बीच संबंधों के सहसा दिखाई दे जाने पर बच्चों के मन में उठने वाली विस्मय-विमुग्धता की भावना। एक दूसरा उतना ही महत्त्वपूर्ण साधन था - कथा-कहानियां। वाल्या बहुत देर तक कोई कहानी खुद नहीं सोच सकी थी और मैं इस बात पर परेशान था। पढ़ाई के तीसरे साल में कहीं वाल्या ने मेंढकी, नाव और मछली की कहानी बनाई। यह रही वह कहानी : ''मेंढकी ने देखा नदी के किनारे नाव खड़ी है। नाव मछेरे दादा की थी। वह उसे खड़ी करके गांव में रोटी लेने गए हुए थे। मेंढकी का नाव में सैर करने का मन हुआ। वह अपने डबरे में से निकल कर नाव में जा चढ़ी और चप्पू संभाल लिया। तभी नदी में से एक मछली बोली : ''मेंढकी री मेंढकी, यह तू क्या कर रही है ? तू तो छिछले डबरे में रहती है, मगर नाव को गहरा पानी चाहिए।'' मेंढकी ने मछली की बात नहीं सुनी और नाव को अपने डबरे की ओर बढ़ा दिया। नाव बोली : ''मेंढकी, मेंढकी, तू मुझे कहां ले जा रही है ?'' मेंढकी ने जवाब दिया : ''अपने डबरे में। आज सारे मेंढक देख लेंगे कैसे मैं नाव चलाती हूं।'' नाव मुस्कुरा दी और मन ही मन सोचने लगी : ''अभी दादा आएंगे, तुझे नाव चलाना सिखा देंगे।'' बड़ी मुश्किल से मेंढकी नाव को डबरे में घसीट लाई। नाव कीचड़ में फंस गई और आगे बढ़ती ही नहीं थी। मेंढकी ने बड़ा जोर लगाया, पर नाव अपनी जगह से टस से मस न हुई। उधर सारे मेंढक-मेंढकियां डबरे में से निकल आए थे

- मेंढकी ने डींग जो हांकी थी : ''देखो, मैं कैसे नाव चलाती हूं।'' अब मेंढकी बहुत शर्मिंदा हुई, वह डबरे में कूद पडी और चारों ओर कीचड़ उछला। सारे मेंढक मेंढकियां जोर-जोर से हंसने लगे। तभी मछेरे-दादा आ गए। वह नाव डबरे से खींच ले गए। मेंढक-मेंढकियां डर के मारे हरी-हरी काई में जा छिपे। शाम को हिम्मत करके वे बाहर निकले और फिर खिल-खिलाकर हंसने लगे। तब रोज रात को वे हंसते हैं - शाम से सुबह तक दलदल में मेंढकों की टर्र-टर्र होती रहती है। वे शेखीबाज मेंढकी पर हंसते हैं।''

कहानियां रचना बच्चों के लिए काव्यमय सृजन की एक सबसे रोचक विधा है। साथ ही यह बौद्धिक विकास का महत्त्वपूर्ण साधन है। अगर आप चाहते हैं कि बच्चे रचना करें, कलात्मक बिंबों का सृजन करें तो अपनी सृजन-ज्वाला की कम से कम एक चिनगारी ही बाल-चेतना में पहुंचा दीजिए। अगर आप स्वयं सृजन नहीं कर सकते हैं या आप बच्चों की अभिरुचियों के संसार में उतरना व्यर्थ की बात समझते हैं, तो कुछ नहीं हो सकता।

''कथा-लोक'' में तीनों का अपना प्यारा गुड्डा था- ढलाई कारखाने का मजदूर। उसके चेहरे पर पिघले लोहे की चमक थी। बच्चों को ढलाई कारखाने के मजदूरों से हमारी भेंट याद रही थी और अब, तीन साल बाद उसने अग्निल नदी की कहानी रची थी।

''विशाल भट्टी के सामने महाबली पुरुष खड़ा है। उसने लोहा गलाया है। लोहा उबल रहा है, उसमें बुलबुले उठ रहे हैं। महाबली पुरुष भट्टी का पट खोलता है और अग्निल नदी बह निकलती है। वह बहती जाती है और कहती जाती है ; 'लोगों, देर नहीं करो, जल्दी से तपा लोहा ले लो और उससे वे सब चीजें बना लो जो तुम्हें चाहिए। सयाने मजदूर अग्निल नदी के पास आते हैं, पिघला हुआ लोहा लेते हैं, उसे रेत में उंडेलते हैं और लोगों के लिए जरूरी चीजें बनाते हैं।''

फासिज्म के विरुद्ध युद्ध और सोवियत जनता की वीरतापूर्ण विजय ने हमारे जनगण के सारे आत्मिक जीवन पर, उसकी स्मृति में गहरी छाप छोड़ी है। मातृभूमि की रक्षा करने वाले वीर बच्चों की कल्पना में परीकथाओं के महाबली पुरुषों के समान हैं। बच्चे उनके बारे में बड़ी ज्वलंत और भावपूर्ण कहानियां रचते हैं। हमारे जनगण के महावीरों की जितनी भी कहनियां बच्चों ने बनाईं, उन सब में सोवियत लोगों के साहस, उदात्तता और अजेयता का विचार पिरोया गया था। दान्को की रची एक कहानी देखिए :

''मां बेटे को फौज में विदा कर रही थी। उसने बेटे से कहा : 'बेटा, अपनी जन्मभूमि की मुट्ठी भर मिट्टी साथ ले लो। सदा याद रखना कि तुम्हें इसकी रक्षा करनी है ! बेटे ने अपनी जन्मभूमि की मुट्ठी भर मिट्टी रेशम की लाल गुत्थी में भर ली। वह इस गुत्थी को सदा सीने से लगाए रखता था। दुश्मनों ने हमारे देश पर हमला कर दिया। बेटे ने सीमा पर दुश्मनों का सामना किया, वह उन पर मशीनगन से गोलियां बरसा रहा था, दुश्मन नदी में गिर रहे थे। बेटा एक कदम भी पीछे नहीं हटा। अचानक दुश्मन की गोली उसके सिर में आ लगी, आंखों में खून भर गया, हाथ कमजोर पड़ गए। तभी उसे अपने घर की मिट्टी की याद आई। लाल गुत्थी को छूते ही उसके हाथों में असाधारण शक्ति आ गई। महावीर फिर से गोलियां चलाने लगा, दुश्मन नदी में डूब गए। तभी सहायता भी आ गई- तेज विमान और शक्तिशाली टैंक।''

मेरे पास अनेक ऐसी कहानियां लिखी हुई हैं, जो बच्चों ने सांझ के झुटपुटे में रची थीं। मेरे लिए ये कहानियां विचारों की ज्वलंत शिखाओं के रूप में प्रिय हैं, जो मैं बाल-हृदयों में जगा सका था। अगर बच्चे कहानियां न रचते, यह सृजनात्मक कार्य न करते, तो अनेक बच्चों की वाणी में प्रवाह न होता, उनका चिंतन अव्यवस्थित होता। मैंने यह पाया कि बच्चों की सौंदर्यबोधात्मक भावनाओं और शब्द-भंडार के बीच सीधा संपर्क है। सौंदर्य अनुभूति शब्दों को भावनात्मक रंग प्रदान करती है। कहानी जितनी दिलचस्प होती है, कहानी सुनते समय बच्चों का परिवेश जितना अधिक असाधारण होता है, उनकी कल्पना की उड़ान उतनी ही सशक्त होती है और उनके रचे बिंब उतने ही अप्रत्याशित होते हैं। सांझ के झुटपुटे में मेरे छात्रों ने दसियों कहानियां रचीं, जिन्हें 'सांझ के झुटपुटे की कहानियां' शीर्षक से हस्तलिखित संग्रह में बांधा गया है।

'सांझ के झुटपुटे की कहानियों' में पशु-पक्षियों और फूलों-पौधों के बारे में कई रोचक कहानियां हैं। फूलों की कहानियां रचने में बच्चों को भी और मुझे भी बड़ा आनंद मिला। मैं बच्चों को इंसान के भावनात्मक जीवन के बारे में बताता था, यह बताता था कि कैसे लोग अपनी भावनाओं को फूलों के बारे में गीतों और किंवदंतियों में व्यक्त करते आए हैं । मैं कहानी की शुरूआत करता था और आगे बच्चे अपनी कल्पना से अनोखे, सजीव बिंबों का सृजन करते चले जाते थे।

हर दो-तीन महीने बाद हम ''कथा-लोक'' के हर कोने में नई सजावट करते थे - प्लाईवुड से नई आकृतियां, पेड़, झाड़ियां काटते थे, परी-कथाओं के महल और झोंपड़ियां बनाते थे। बच्चों ने पेपर-माशे से कहानियों के नायकों की आकृतियां बनाना सीख लिया। इससे कहानियों की दुनिया और भी समृद्ध हो गई। हमने उक्राइनी लोक-कथा 'भाई इवान', झुकोव्स्की की 'सोती रानी', अक्साकोव की 'लाल फूल', दाल की 'पैने दांतों वाली चुहिया और अमीर गौरैया', गार्शिन की 'मेंढकी की यात्रा', डेनमार्क के हांस एंडरसन की 'बर्फ की रानी', जर्मनी के जैकब ग्रीम और

विल्हेल्म ग्रीम की 'ब्रेमन के गवैये', फ्रांस के शार्ल पेर्रो की 'निद्रामग्न सुंदरी', रूसी लोक कथा 'सुंदरी मार्या और वान्या', स्वीडन की लोक-कथा 'घर की कील' तथा जापानी लोक-कथा 'कुबड़ी गौरैया' के लिए आकृतियां बनाईं। जिस तरह हमें खुशियां प्रदान करने वाले प्रिय व्यक्ति की छवि हमारी चेतना में सदा के लिए अंकित हो जाती है, उसी तरह बच्चों के आत्मिक जीवन में इन कहानियों ने अपना स्थान बना लिया। बच्चों को जीवन भर के लिए इन कहानियों का एक-एक शब्द याद हो गया, जबकि उनसे कभी किसी ने इन्हें याद करने को नहीं कहा। जब शब्द अपने अद्वितीय सौंदर्य से, अपनी छटाओं से बाल-हृदय को उत्तेजित करते हैं, तो वे सदा के लिए याद हो जाते हैं । इससे स्मरण-शक्ति पर कोई जोर नहीं पड़ता, उलटे वह इससे और भी तीव्र हो जाती है।

पहली बार किसी नई कहानी को कहना-सुनना बच्चों के जीवन में बहुत बड़ी घटना होती है। मैं कभी नहीं भूलूंगा कि कितने उत्साह, उमंग के साथ बच्चों ने एंडरसन की कहानी 'बर्फ की रानी' के लिए अपने ''कथा-लोक'' में सजावट की थी। तब बच्चे दूसरी कक्षा में पढ़ते थे। कहानी की घटनाएं ढलवां छतों वाले मकानों, ऊंचे-ऊंचे टीलों के बीच बने बर्फ की रानी के महल में होती हैं। बर्फीले मैदानों में हिम के ढेरों के बीच हिरन तेजी से दौड़ता जाता है। बच्चों ने यह सब अपने हाथों से बनाया। जाड़े की संध्या को सब बच्चे ''कथा-लोक'' में इकट्ठे हुए। मकानों की खिड़कियों में रोशनी हो गई, आसमान से बर्फ गिर रही थी, हमारे चारों ओर सांझ का झुटपुटा था। बच्चे सांस रोके कहानी सुन रहे थे... कहानी खत्म हो गई, पर बच्चों ने फिर से सुनाने का अनुरोध किया। जितनी बार बच्चों ने कहा, उतनी बार मैंने कहानी सुनाई। शब्दों के प्रति बच्चों का यह आकर्षण, यह विमुग्धता मेरे लिए अमूल्य उपहार थे। बच्चे बार-बार 'बर्फ की रानी' की कहानी सुनना चाहते थे, इसलिए नहीं कि उन्हें उसके शब्द याद करने थे, बल्कि इसलिए कि वे उनके लिए आश्चर्यजनक संगीत की तरह ध्वनित होते थे।

शिक्षक सदा यह सोचता रहता है : किस तरह बच्चों को अपनी मातृ-भाषा का गहन ज्ञान प्रदान किया जाए, मातृभाषा के शब्दों को किस तरह उसके आत्मिक जीवन का ऐसा अंश बनाया जाए कि वे तेज छेनी भी और विविधतापूर्ण रंग-पट्टिका भी और सत्य का ज्ञान पाने का सूक्ष्म उपकरण भी बन जाएं। भाषा चिंतन की, विचारों की भौतिक अभिव्यक्ति है और बच्चा उसे केवल तभी जान सकेगा, जबकि अर्थ के साथ-साथ वह उज्जवल भावनात्मक रंगत को भी, शब्दों में स्पंदित होते संगीत को भी ग्रहण करेगा। शब्द के सौंदर्य की अनुभूति के बिना बच्चे की बुद्धि उसके अर्थ के गूढ़ पहलुओं को नहीं समझ पाएगी। सौंदर्य की अनुभूति तो कल्पना की उड़ान के बिना, उस सृजन में, जिसका नाम है बाल-कथाएं, बच्चे के भाग लिए बिना हो ही नहीं सकती। बाल-कथाएं सक्रिय सौंदर्यबोधात्मक सृजन हैं, जिसमें बच्चे के आत्मिक जीवन के सभी क्षेत्र भाग लेते हैं - उसकी बुद्धि, भावनाएं, कल्पना शक्ति और इच्छाबल। कहानी कहने के साथ यह सृजन आरंभ होता है और इसका उच्चतम शिखर तब होता है, जब बच्चे कहानी को खेलते हैं।

हमारे ''कथा-लोक'' में ही कठपुतली थियेटर और नाटक मंडली का जन्म हुआ। यहां बच्चों ने पहली बार एक उक्राइनी लोककथा खेली, जिसमें एक दस्ताने में चूहा और दूसरे बहादुर जानवर मिलकर रहने लगते हैं। फिर बड़े जोश के साथ बच्चों ने राजकुमारी मेंढकी की कहानी और कुबड़ी गौरैया की जापानी लोक-कथा खेली। चौथी कक्षा में बच्चों ने मिलकर संगीतकार टिड्डी की कहानी बनाई और उसकी भूमिकाएं अदा कीं।

''कथा-लोक'' में मैंने बच्चों को पहली बार रॉबिन्सन क्रूजों की कहानी, 'म्यूनहाजन के कारनामे', 'गुलीवर की यात्राएं', 'जार सुल्तान का किस्सा' और 'यान्को संगीतकार' कहानी - ये सब पुस्तकें पढ़कर सुनाईं। बच्चे जीवनभर जाड़ों की उन संध्याओं को नहीं भूलेंगे, जब खिडकी के बाहर बर्फीली आंधी चल रही होती थी और वे रॉबिन्सन क्रूजों के साथ दुर्घटनाग्रस्त जहाज में से बचकर सूने द्वीप पर चढ़ते थे, उसके साथ मिलकर प्रकृति के साथ संघर्ष की सब कठिनाइयां सहते थे। ''कथा-लोक'' में हमने एंडरसन, तोलस्तोय, उशीन्सकी, ग्रीम बंधुओं और सोवियत लेखकों कोर्नेई चुकोव्स्की तथा समुईल मर्शाक की लिखी सारी बाल-कथाएं पढ़ डालीं। कथा-कहानियों में भलाई और बुराई, सच्चाई और झूठ, ईमानदारी और बेईमानी के जो नैतिक विचार निहित होते हैं, उन्हें इंसान केवल तभी आत्मसात करता है, जबकि ये कथा-कहानियां बचपन में पढ़ी गई हों। कथा-कहानियां तो होती ही बच्चों के लिए हैं।

हमारा पठन-पाठन भी मौलिक ही था : यहां चर्चित बाल-कथाएं और कहानियां मुझे कंठस्थ थीं। किताब मैं केवल इसलिए हाथ में लेता था कि बच्चे उसमें बने चित्र देख सकें। कहानियां सुनने-सुनाने की ही भांति, पठन-पाठन भी बच्चों में नेक, मानवीय भावनाएं जगाने, उन्हें विवेकशील बनाने का सशक्त साधन था।

बचपन में पठन-पाठन सर्वप्रथम हृदय को संवारता है - यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है- उदात्त मानवीय विचार बाल-हृदय के अंतरंग तारों को स्पर्श करते हैं। उदात्त विचारों को उजागर करने वाला शब्द बाल-हृदय में सदा के लिए मानवीयता के कण छोड़ जाता है और ये मिलकर ही उसका ईमान, उसके अंत:करण का स्वर बनते हैं । ◆